

महात्मा ज्योतिबा फुले और डॉ. भीमराव अंबेडकर के विचारों में सामाजिक समरसता और शिक्षा के महत्व का अध्ययन

Noopur Verma, (Research Scholar)

Dr. Yatendra Pal Associate Professor (Supervisor)

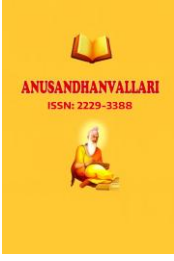
Institute of Education and Research

Manglayatan University, Beswan, Aligarh

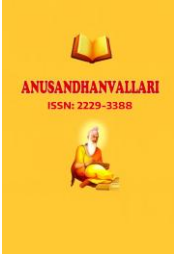
सारांश महात्मा ज्योतिबा फुले को सामाजिक क्रांति के अग्रदूत के रूप में जाना जाता है। उनका मानना है कि शिक्षा समाज में बदलाव लाने का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। महिलाएं, शूद्र, अछूत और समाज का वंचित वर्ग समाज के महत्वपूर्ण घटक हैं और वे आबादी का एक बड़ा हिस्सा हैं। इन सभी कारकों को बिना इस अधिकार का उल्लंघन किए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होना चाहिए। सभी मनुष्यों को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्रदान करना समाज में रचनात्मक परिवर्तन लाने की प्रक्रिया के लिए महत्वपूर्ण है। एक नई सामाजिक व्यवस्था उन सभी उपेक्षित और वंचित कार्यबल को मुख्य विकास में लाने का प्रयास करती है और उनका मानना है कि स्थिर और व्यापक विकास के लिए सभी कारक समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। डॉ. भीमराव अंबेडकर के सामाजिक न्याय के लिए शिक्षा, संगठन और सक्रियता की आवश्यकता होती है। लोग ज्ञान और जागरूकता प्राप्त करके शिक्षा के माध्यम से बदलाव ला सकते हैं। संगठन लोगों को एक साथ लाकर सहयोग करने और कार्रवाई करने में सक्षम बनाता है। उत्तेजित माहौल लोगों को कार्रवाई करने के लिए प्रेरित करता है और उनमें तत्परता की भावना पैदा करता है। स्थायी सामाजिक न्याय बनाने के लिए अनेक तत्वों का यह संयोजन करना इसके लिए अति आवश्यक होता है। शिक्षा के माध्यम से, नए विचारों और अबधारणाओं को अंकुरित किया जा सकता है और यह आत्म-भावना को अंकुरित करने के लिए अतिआवश्यक है।

मुख्य शब्द, शिक्षा समाज, सामाजिक क्रांति के अग्रदूत, शिक्षित करो, आंदोलन करो और संगठित करो आदि।

परिचय, शिक्षा अन्याय के बारे में जागरूकता लाने में सफल होती है और अंततः स्वतंत्रता और न्याय की प्राप्ति के लिए आंदोलन में परिणत होती है। शिक्षा के माध्यम से ही नए विचार और धारणाएँ बनती हैं, संगठनों के माध्यम से इन विचारों को क्रियान्वित किया जाता है। आंदोलनों के माध्यम से आवश्यक परिवर्तनों को प्रभावी बनाने के लिए दबाव बनाया जाता है। गरीब लोगों का पिछड़ापन मुख्य रूप से शिक्षा की कमी के कारण था। शिक्षित करो, आंदोलन करो और संगठित करो हमारे उद्धारकर्ता के तीन अंतिम शब्द हैं। डॉ. भीमराव अंबेडकर का मानना था कि आंदोलन के लिए आंदोलन करने से पहले शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, ताकि लोग उनकी मदद से संगठित हो सकें।



महात्मा फुले ने इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर लोक शिक्षा का कार्य प्रारंभ किया। यदि कोई व्यक्ति शिक्षा के महत्व को समझ ले, तो वह स्वतः ही शिक्षा की ओर आकर्षित हो जाएगा। इसलिए, यह समझते हुए कि पहले शिक्षा के महत्व को समझना आवश्यक है और इसके क्या लाभ हैं, उन्होंने लोक शिक्षा के लिए ऐसी विषय-वस्तु वाली पुस्तक की रचना की। यदि आप उनकी पुस्तकों के निर्माण के पीछे के उद्देश्य-पत्रों को देखें, तो आपको यह अभिप्राय समझ में आ जाएगा। इस अध्ययन में प्राचीन, मध्यकालीन से लेकर आधुनिक काल तक की भारतीय शिक्षा प्रणाली का व्यापक सर्वेक्षण करता है। यह शिक्षा के एकाधिकार से लेकर सार्वभौमिक और अनिवार्य शिक्षा तक की भारतीय शिक्षा प्रणाली का प्रक्षेप और विश्लेषण है। मनु ने शिक्षा को केवल ब्राह्मणों तक सीमित कर दिया था, इसलिए इसने सामाजिक विकास पर प्रतिगामी और बंद प्रभाव डाला। वेदों का अध्ययन गौरव की बात थी और यह तीनों वर्णों का विशेषाधिकार था। इसने शूद्रों के विकास पर गहरा प्रभाव डाला और समय के साथ यह और भी बढ़ गया। शूद्रों को हर तरह से वंचित रखा गया, मनुस्मृति उन्हें ज्ञान प्राप्त करने की अनुमति नहीं देती आगे इस भोध में भोधार्थिनी इनका यथा स्थान विस्तृत विवरण प्रस्तुत करेगी। समाज के लिए भोजन का बड़ा हिस्सा किसान और मजदूर ही देते हैं, लेकिन समाज की यह दोषपूर्ण व्यवस्था उन्हें जानबूझकर विकास के मुख्य मार्ग से वंचित रखती है। इसलिए शिक्षा व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति को उजागर करती है, शिक्षा की बात सामने आने पर इन वर्गों को अंधेरे में रखा गया। समाज पर नियंत्रण बनाए रखने के साधन के रूप में, प्रमुख ताकतों ने शीर्ष पर अपनी स्थिति की रक्षा के लिए मनगढ़ंत और झूठी कहानियाँ गढ़ीं। यह सर्वविदित सत्य है कि यदि समाज के सबसे कमजोर वर्ग का कोई भी व्यक्ति अन्याय का विरोध करने का प्रयास करता है, तो स्थापित व्यवस्था उसे कठोर दंड देगी। इस कारण से, भविष्य में समतावादी समाज के विकास के लिए शिक्षा पर महात्मा ज्योतिबा फुले के विचार महत्वपूर्ण हैं। वे अपने काम के प्रति अपने दृष्टिकोण में व्यावहारिक थे, हालांकि वे अपने सोचने के तरीके में पश्चिमी व्यावहारिकता का अंधानुकरण नहीं करते थे। उन्हें यह अच्छी तरह से पता था कि मनुष्य में कमजोरियाँ होती हैं। 20वीं सदी की शुरुआत में डॉ. भीमराव अंबेडकर ने अछूतों के उत्थान में एक अनूठी भूमिका निभाई और यह जरूरी ही है कि उनके उत्थान में योगदान देने में आधुनिक शिक्षा और इसकी भूमिका पर अधिक जोर दिया जाए। बैठकों, सम्मेलनों और व्याख्यानों में डॉ. भीमराव अंबेडकर ने युवाओं को अपनी सामाजिक स्थिति और छवि को ऊपर उठाने के लिए शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया। अपने काम के जरिए डॉ. भीमराव अंबेडकर ने वर्गों के साथ-साथ आम जनता की शिक्षा में भी योगदान दिया। अछूतों के लिए डॉ. भीमराव अंबेडकर का विचार उनके शैक्षिक मानकों को ऊपर उठाना था ताकि वे अपनी स्थिति से अवगत हो सकें, आकांक्षाएँ रख सकें और सर्वोच्च हिंदू होने के अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए राजनीतिक शक्ति का उपयोग करने की स्थिति में आ सकें। अपने प्रसिद्ध नारे, शिक्षित करो, आंदोलन करो और संगठित हो, में डॉ. भीमराव अंबेडकर इसे सबसे अच्छी तरह दर्शाते हैं। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने माना कि सामाजिक व्यवस्था में रचनात्मक बदलाव लाने के लिए शिक्षा सबसे शक्तिशाली हथियार है। शिक्षा कौशल, चरित्र और मानवतावादी संवेदनशीलता को बढ़ावा देती है ताकि समाज में सकारात्मक बदलाव लाया जा सके। महात्मा जोतिराव फुले एक रचनात्मक विचारक थे। शूद्र-अतिशूद्रों की दयनीय स्थिति अज्ञानता का परिणाम है।



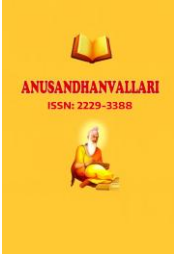
उन्होंने शिक्षा के कारण होने वाले लाभों की प्रकृति को भी स्पष्ट किया। उन्होंने शूद्र-अतिशूद्रों को बार-बार बताया कि ज्ञान और शिक्षा में व्यक्तियों को विभिन्न प्रकार की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक गुलामी से मुक्त करने की जबरदस्त शक्ति है। यह समझाते हुए कि शिक्षा एक शक्ति है, उन्होंने इस शक्ति का उपयोग सामाजिक परिवर्तन के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में किया। इसी कारण उन्होंने यह पुस्तक लिखी। इसने शूद्र अतिशूद्रों को ज्ञान के महत्व और उसके लाभों के बारे में समझाया गया है। मनुष्य का दुख उसके अज्ञान में निहित है, वास्तव में, अज्ञान ही मनुष्य का एकमात्र रोग है। और विनाश करने की मूल शक्ति, वह केवल शिक्षा में ही निहित है।

भोध पूर्व साहित्यक अवलोकन

नावरिया, अजय. (2024), "दलित साहित्य और सौंदर्यशास्त्र" केरवन - इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एफ्रो-एशियाटिक स्टडीज एलेसेंझा कंसोलारो के साथ बातचीत में, डॉ. अजय ने दलितों और दलित साहित्य के निर्माण और दलितों के सौंदर्यशास्त्र के बारे में बात की है। शिक्षा के क्षेत्र में ऐसे हालात अंग्रेजों के भारत में आने से पहले थे। इसके बाद अंग्रेजों ने सन् 1836 में पूणे जिले में सरकारी खर्च से, कुछ देहातों में प्रायोगिक रूप से ग्रामशालाएँ खोली गईं। उनमें लेखन और गणित विषय पढ़ाये जाते थे। पर, कुछ ही वर्षों बाद, सन् 1862 में वह योजना बंद कर दी गई। भारत में अंग्रेजों का शासन आने से पहले प्रजा को शिक्षा दिलाना सरकार का दायित्व नहीं माना जाता था। अंग्रेजी शासन के कारण कुछ नये बंधन आ गये।

नामदेव, (2024) महात्मा ज्योतिबा फुले आधुनिक सामाजिक क्रांति के अग्रदूत नामक शोध पुस्तक का निष्कर्ष इस प्रकार रहा है। महात्मा ज्योतिबा फुले सिर्फ एक सशक्त सामाजिक कार्यकर्ता ही नहीं थे बल्कि उससे कहीं आगे वह एक बेहद सशक्त क्रांतिकारी लेखक रचनाकार भी थे। फुले का समस्त सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक चिंतन उनके साहित्य में झलकता है। फुले का सम्पूर्ण क्रांतिकारी तेवर और संघर्षमयी व्यक्तित्व उनकी रचनाओं में समाया हुआ है। उनकी रचनाएँ जहाँ एक ओर अपने समकालीन प्रश्नों, अंतर्विरोधों, सामाजिक विसंगतियों से टकराती दिख रही हैं वहीं एक बेहतर लोकतांत्रिक समाज की कल्पना भी करती दिख रही हैं।

फुले ज्योतिराव, एम. (2024) गुलामगीरी नामक विश्व प्रसिद्ध पुस्तक के निष्कर्ष के आधार पर स्पष्ट कहा जा सकता है कि आधुनिक भारतीय साहित्य में महात्मा ज्योतिबा फुले की महान कृति 'गुलामगीरी' का अपना महत्व है। उनका यह ग्रंथ कोई धार्मिक नहीं है। उसी प्रकार वह धर्म संबंधी भी नहीं है। यह ग्रंथ किसी धर्म-ग्रंथ पर लिखा हुआ भाष्य-ग्रंथ भी नहीं है। इस ग्रंथ के साथ कोई देवी या अलौकिक मान्यताएं, आस्थाएं भी जुड़ी हुई नहीं हैं। उसी प्रकार उनका यह पंथ आकार-प्रकार में भी कोई बहुत बड़ा नहीं है। फिर भी आधुनिक भारतीय साहित्य में इस ग्रंथ का जो महत्व है, वह शायद ही अन्य किसी ग्रंथ का होगा। आधुनिक भारत में कई महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना हुई। और उन ग्रंथों का भारतीय जनमानस पर कुछ प्रभाव भी पड़ा है।



मुरलीधर, जे. (2024) सामाजिक क्रांति के अग्रदूत महात्मा फुले नामक शोध पुस्तक के आधार पर यह निष्कर्ष निकला है कि ज्योतिबा के पूर्व, आज जिसे हम शिक्षा कहते हैं, वह अस्तित्व में नहीं थी। जहाँ कुछ ऊँची जातियों के लोग बड़ी संख्या में रहते थे, वहाँ कुछ शास्त्री निजी पाठशालाएँ चलाते थे। इनमें संस्कृत, व्याकरण, न्यायशास्त्र, वेदिकशास्त्र, वेदांत, ज्योतिष, धर्मशास्त्र जैसे विषय पढ़ाये जाते थे। भारत के समाज की कनिष्ठ जातियों को शिक्षा का अधिकार था ही नहीं, फिर उनके बच्चों को शिक्षा देने का प्र न ही नहीं उठता, कुछ देहातों में प्राथमिक शिक्षा देने वाली पाठशालाएँ हुआ करती थीं और उनमें सिर्फ व्यापारियों तथा धनवानों के पुत्रों को शिक्षा दी जाती थी, पर उसका उद्देश्य केवल लिपिक का काम सिखाना या साहूकारी करने के लिए आवश्यक बातों का ज्ञान देना था।

वर्मा, वी. (2024) सामाजिक क्रांति में ज्योति स्तम्भ महात्मा फुले नामक पुस्तक के निष्कर्ष के आधार पर सत्य शोधक समाज का उल्लेख इस प्रकार किया गया है कि पन्द्रह वर्ष के लगातार संघर्ष के बाद जोतिबा ने अनुभव किया कि उनके विचारों, सिद्धान्तों तथा आदर्शों के सम्यक् प्रचार एवं प्रसार के लिए एक ऐसा व्यवस्थित मंच और संस्था की आवश्यकता है जिसके माध्यम से छोटे वर्गों को समाज के समान घरातल पर लाने के लिए भरपूर प्रयास किया जाय। अभी तक जोतिबा ने पुस्तकों, पर्चों तथा भाषणों के द्वारा ही इस कार्य को सम्पादित किया था।

भोध पत्र के उद्देश्य,

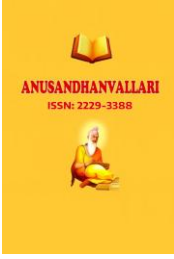
- डॉ भीमराव आम्बेडकर एवं महात्मा ज्योतिबा फुले के शैक्षिक विचारों की समानता एवं विषमता का अध्ययन करना।
- वर्तमान परिप्रेक्ष्य में डॉ आम्बेडकर और महात्मा ज्योतिबा फुले के शैक्षिक विचारों का अध्ययन करना

भोध पत्र के प्रान,

- डॉ भीमराव अम्बेडकर और महात्मा ज्योतिबा फुले के शैक्षिक विचारों में क्या समानता पाई जाती है।
- डॉ भीमराव अम्बेडकर और महात्मा ज्योतिबा फुले के शैक्षिक विचारों में क्या क्या समानता पाई जाती है।

भोध विधि

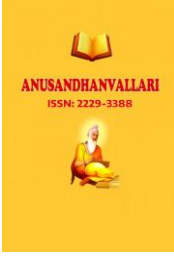
24 सितंबर 1873 में महात्मा ज्योतिबा फुले ने 'सत्य शोधक समाज' नामक एक संस्था की स्थापना की थी, ये संस्था नीची समझी जाने वाली और अस्पृश्य जातियों के उत्थान के लिए काम करती थी। बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर भी महात्मा फुले के विचारों से प्रभावित थे। उन्होंने पुणे में लड़कियों के लिए भारत की पहला विद्यालय खोला। लड़कियों और दलितों के लिए पहली पाठशाला खोलने का श्रेय ज्योतिबा फुले को दिया जाता है। के लिए विभिन्न शोध विधियों में से प्रस्तुत भोध पत्र में वर्णनात्मक भोध विधि को इस भोध में प्रयोग इस इस भोध के साथ साथ में इस भोध पत्र में अनुसंधान की ऐतिहासिक भोध विधि का भी प्रयोग, किया गया है।



निश्कर्ष महात्मा ज्योतिबा फुले ने सार्वभौमिक और अनिवार्य शिक्षा का समर्थन किया। शिक्षा में सार्वभौमिकता का अर्थ है सभी को उनकी जाति, लिंग, धर्म या शारीरिक या मानसिक विकलांगता की परवाह किए बिना सभी शैक्षिक अवसरों का विस्तार करना। महात्मा ज्योतिबा फुले ने एक व्यापक पैमाने पर समाज के विकास के लिए सार्वभौमिक शिक्षा की वकालत की थी। उनकी दृष्टि में, एक नया सामाजिक क्रम समतावादी सिद्धांतों पर आधारित होगा। भारतीय संविधान, भाग III अनुच्छेद 45, समाजवादी सिद्धांत का मूल अनुच्छेद माना जाता है। महात्मा ज्योतिबा फुले को बहुत दुख हुआ जब उन्होंने महसूस किया कि ब्रिटिश साम्राज्य ने शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने के बारे में प्रतिगामी दृष्टिकोण अपनाया था। शिक्षा विभाग के बयान में, उन्होंने ब्रिटिश प्रशासन को सार्वभौमिक और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने के संदर्भ में अपने कर्तव्यों को पूरा करने में लापरवाही बरतने के लिए चेतावनी दी। महात्मा ज्योतिबा फुले ने शिक्षा जाति भेद को मिटाने का एक साधन है। भारतीय जाति व्यवस्था में श्रेणीबद्ध असमानता है। यह विभाजन न केवल श्रम का विभाजन करता है, बल्कि श्रमिकों के लिए काम का विभाजन भी करता है। इसलिए, जाति व्यवस्था जातियों के बीच पदानुक्रम की व्यवस्था बनाती है, और अप्रत्यक्ष रूप से यह जातियों के बीच ईर्ष्या को बढ़ाती है। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने शिक्षा पर जोर दिया, शिक्षा मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता है, शिक्षा के बिना मानव जीवन निरर्थक है। उन्होंने शिक्षा के महत्व और शिक्षा के व्यापक प्रसार को महसूस किया। उन्होंने शिक्षा के अधिकार को उन लोगों तक पहुँचाने के लिए शिक्षण संस्थाओं की स्थापना की, जिन्हें दोषपूर्ण संस्थानों के तहत वंचित रखा गया था। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने 8 जुलाई 1945 को बॉम्बे में जन शिक्षा सोसायटी की स्थापना की। जिम्मेदार नागरिकों का निर्माण करना और समाज में बौद्धिक, नैतिक और लोकतांत्रिक संस्कृति को बढ़ावा देना इस शिक्षण संस्थाओं का प्रमुख उद्देश्य था, इसी के साथ शिक्षण संस्थाओं की स्थापना के पीछे कुछ उद्देश्य और भी थे। वे लोकतंत्र में दृढ़ विश्वास रखते थे। शिक्षा लोकतांत्रिक मूल्यों को मजबूत कर सकती है, इसलिए उन्होंने उन सभी लोगों को शिक्षण संस्थानों को उपलब्ध कराने का प्रयास किया, जो सदियों पहले दमन के कारण शैक्षिक अधिकारों से वंचित थे। इस सोसायटी का संचालन ग्यारह सदस्यीय भासकीय निकाय द्वारा किया जाता था। जून 1946 में इस सोसायटी ने फोर्ट में सिद्धार्थ कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड साइंस की स्थापना की, जो सोसायटी द्वारा स्थापित की जाने वाली पहली शैक्षणिक संस्था थी। 1950 में सोसायटी ने औरंगाबाद में मिलिंद महाविद्यालय की स्थापना की, जो सोसायटी की एक इकाई थी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- 1 बौद्ध, एस.एस. (2013). ज्योतिबा फुले की अमर कहानी, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 164
- 2 धनंजय, कीर. (2011). ज्योतिबा फुले के शैक्षिक विचार का अध्ययन, (अप्रकाशित शोध प्रबंध), महात्मा ज्योतिबा फुले रोहिलखंड विश्वविद्यालय, बरेली, पृष्ठ 114
- 3 योगमाया (2004) महात्मा ज्योतिराव फूले दर्शन एवं चिन्तन, जयपुर राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पृष्ठ 114



- 4 अम्बेडकर, बाबासाहेब (2015). काठमांडू का भाषण, (बुद्ध या कार्लमार्क्स) सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 59
- 5 भटनागर, आर. एम. (1980), डॉ. अम्बेडकर जीवन और दर्शन, किताब घर, नई दिल्ली, पृष्ठ 123
- 6 मेश्राम, एल.जी., सम्पादक एवं अनुवादक, (2002), महात्मा ज्योतिराव फुले रचनावली-2 : नई दिल्ली राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि. पृष्ठ 99-102
- 7 अम्बेडकर, बाबासाहेब (2009). बौद्ध धर्म ही मानव धर्म, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 238
- 8 कुशवाहा, एम. (2002). भीमराव अम्बेडकर के सामाजिक न्याय की अवधारणा, (अप्रकाशित शोध प्रबंध), समाजशास्त्र विभाग सामाजिक विज्ञान संकाय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, पृष्ठ 267
- 9 सरकार, सुमित. (2017) आधुनिक भारत का इतिहास राजकमल प्रकाशन पुरानी दिल्ली, पृष्ठ 175